मोक्षोपाय

स्वामी राधाशरण परमहंस

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

मोक्षोपाय

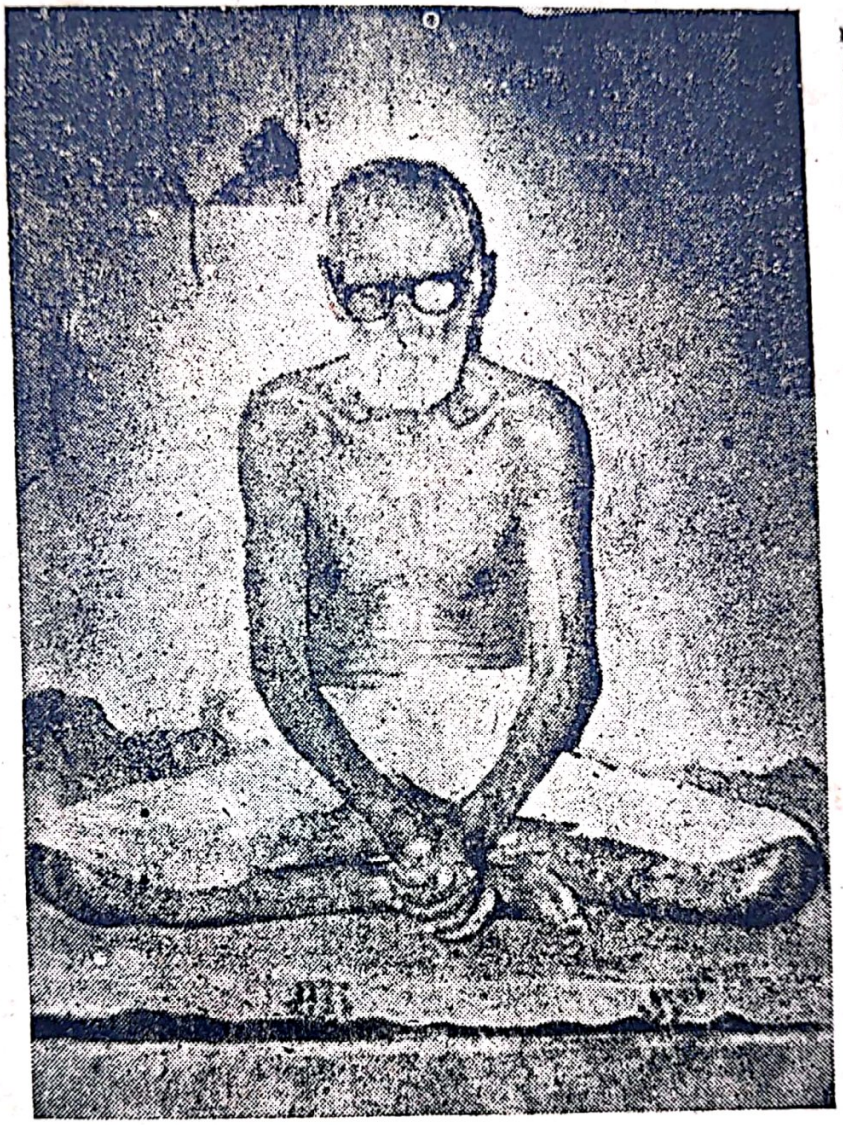

स्वामी राधाशरण परमहंस

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

मोक्षोपाय

प्रकाशक विश्वनाथ ब्रह्मचारी
धर्म्मसंघ
बिहार

(सर्वाधिकार सुरक्षित)

प्रथम संस्करण—१०००
सहायतार्थ—मात्र दो रुपया

मुद्रक—'उत्तम' प्रकाशन
बलिया

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

प्रार्थना

हे प्रभो आनन्द दाता ज्ञान हमको दीजिए,
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए।
लीजिए हमको शरण में हम सदाचारी बनें,
ब्रह्मचारी धर्म रक्षक वीर व्रतधारी बनें,
स्वव·णआश्रम छोड़कर भक्ति करे नादान ही,
घरमें मधु जिसके नही बन-बन भटकता है वहीं।
स्वधर्म पालन भक्ति है भगवान कहते हैं यही,
जगद् गुरु जो धर्म है उसको छोड़े नादान ही।
सुख नहीं संसार में यह समझ में आता नहीं,
विश्व की दुख रुपता भी समझ में आती नहीं।
जान में अनजान में अपराध जो हमसे हुए,
क्षमा नहीं हम चाहते प्रभु। दण्ड की है याचना।
दण्ड देना हम पतित को भूल मत जाना कहीं,
प्रार्थना अन्तिम हमारी याद रखना है प्रभो।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

गुरु प्रार्थना

हे मेरे गुरुदेव करुणासिन्धु करुणा कीजिए।
हूँ अधम अधीन अशरण अब शरण में लीजिए॥
खा रहा गोते हूँ मैं भव सिन्धु के मझधार में।
आसरा है दूसरा कोई न अब संसार में॥
मुझमें है जप-तप न साधन और कुछ नहीं ज्ञान है।
निर्लज्जता है एक बाकी और बस अभिमान है।
पाप बोझे से लदी नैया भंवर में जा रही।
नाथ दौड़ो अब बचाओ जल्द डूबी जा रही॥
आप भी यदि छोड़ देंगे फिर कहाँ जाऊंगा मैं?
जन्म दुख से नाव कैसे पार कर पाऊंगा मैं?
सब जगह मैंने भटक कर ली शरण प्रभु आपकी।
पार करना या न करना दोनों मर्जी आपकी।
नाशवन संसार की तृष्णा मुझे सता रही।
बुद्धि को निर्मल बना दो, आयु बीती जा रही।
स्ववर्ण-आश्रय-धर्म का पालन करूं मैं सर्वदा।
नाथ दो आशीश मुझको ईश भक्ति हो सदा।
हे मेरे गुरुदेव॥

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

मानव जीवन का उद्देश्य क्या है ? इस पर पूज्य ब्रजवासी स्वामी (राधाशरण परमहंस) विविक्त सेवी बनकर विचार किये हैं। एकान्त वास में इनकी अधिक रुचि रही है। नेपाल के क्षेत्र में इनका समय पालपा, पोखरा, तामसेन आदि स्थलों में व्यतीय हुआ है। वे निरन्तर मानव हित की बातों पर बल दिए हैं। सनातन परम्परा के पक्षपाती थे। वे कहा करते थे, साधन चतुष्टय का अभ्यास स्वधर्म पालन से सम्भव है। आचार्य शंकर का वचन दुहराया करते थे। स्व० वर्णश्रिम धर्मेण तपसा हरि तोषणात्। साधनं प्रभवेत पुणो वैराग्यादि चतुष्ट्यम्। इत्यादि।

जिस किसी भी व्यक्ति के लिए यही कहा करते थे। निष्काम, धार्मिक अनुष्ठान कर्मयोग है। 'कायेन मनसा वुद्धया केवलैरिन्द्रियैरपि, योगिनः कर्म कुर्वन्ति संगम् त्वत्वात्म शुद्धये। गीता ५ ११

अन्तःकरण की शुद्धि, वासना की निवृत्ति से है। मनोनाशु वासनाक्षय तथा तत्व बोध समकाल में ही होता है। जाति कुल गोत्र के अनुसार किया गया कर्म भगदर्थ उत्तम है। इसमें शान्ति अवश्य मिलती है। कालान्तर में आत्मज्ञान भी हो सकता है।

पूज्य स्वामी जी अधिकारी के लिए साधन का वर्णन संक्षेप में किये हैं। ये अन्तरंग साधनाएं हैं। कुशाग्रवुद्धि इसे पकड़ सकता हैं तथा सुख-शान्ति प्राप्त कर सकता है। ऐसा ही व्यक्ति अपना, समाज का, देश का तथा सम्पूर्ण विश्व भला करने में समर्थ है।

स्वामी पशुपति बाबा

मकर संक्रान्ति २४४१ दुलहपुर (भोजपुर) बिहार

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

स्वामी शिवानन्दजी परमहंस की सम्मति

मुझे ब्रह्मलीन स्वामी कठौता महाराज का यह प्रवचन संग्रह देखने को मिला। इसके सम्बन्ध में कुछ शब्द आपके सम्मुख प्रस्तुत है। "मोक्षोपाय" लघु पुस्तिका में मोक्ष क्या है? मुक्ति किसे कहते हैं? इसे कैसे प्राप्त किया जाय इस बात को समझाया गया है।

"प्रपंच विलयो मोक्ष, बाध रूपेण अद्वैत वादिनः। प्रपंच का विलय है। मोक्ष है यह विलयपूर्वक बाध है। इसी को अद्वैत सिद्धान्त में मुक्ति कहा गया है। इसी के साथ मुक्ति का दूसरा लक्षण भी निम्न है।

विद्या निरस्ताद विद्यातत्कार्य ब्रह्मात्मनावस्थानमिति वेदान्तवादिनः। इन दोनों में 'मोक्ष' लक्षण का तदात्म्य है। तदात्म्य लक्षण भी निम्म है।

अभिन्नत्वे सति भिन्नत्वमेव भासित्वम्।

यह तत्ववेत्ता (बोधवान) दृष्ट्या है। अविभक्तं च भूतेषु विभक्त मेव स्थितम्" यह उच्चाधिकारी के लिये है।

जाग्रत् लक्षणम्—सवस्तु सोयलम्भं च द्वै लौकिकनिष्यते जाग्रतावस्था। जिसमें वस्तु और उसकी उपलब्ध हो, उसे द्वै लौकिक कहते हैं। यही जाग्रतावस्था है।

स्वप्न लक्षणम्-अवस्तु सोयलम्मंच शुद्धं लौकिकमिष्यते स्वप्नावस्था। वस्तु न होने पर वस्तु की प्राप्ति स्वप्न है।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

सुसुप्ति लक्षणम्--(प्रसुप्त लक्षणम्) अवस्तु अनुपलम्भं च लोकानाँ बीजावस्था प्रसुप्तावस्था।

प्रसुप्तावस्था में 'अहं' अर्थ रूप से शेष नहीं रहता' अविद्या रुप से शेष रहता है'

कर्म—शास्त्र विहित कार्य को निष्काम भाव से करना ही कर्म है। इस पर जो जुटता है! उसे कर्मयोगी कहते हैं। शास्त्र विहित कर्म होते हुए सकाम कर्म 'विकर्म' है और बोध की प्रकाष्ठा अर्थात् जीवन मुक्तावस्था में चलकर यही अकर्म हो जाता है।

ज्ञान की सात भूमिकाएं हैं। शुभेच्छा, विचारण, तन्मानसा, सत्वपत्ति, असं सक्ति, पदार्थाभावनी, तुर्यगा। [प्रथम तीन साधन पक्ष अर्थात् अज्ञान दशा में है। अज्ञान की निवृत्ति में उपाय रूप है।

सत्वापत्ति में बोध हो जाता है। असम सक्ति में बोध प्रगाढ़ता होती है। असम सक्ति में सारे प्रपंच की समाप्ति हो जाती है। 'तुर्यगा' अवाच्य पद है। निर्गुण निराकार रूप हैं। इसके भी दो भेद हैं।

इसके भी दो भेद हैं—(१) वृत्ति की भूमिका (२) बोध की भूमिका। तुर्यगा में वृत्ति का उत्थान होता ही नहीं है। जैसे जड़भरत और ऋषभदेव यहां केवल ज्ञात ज्ञातं प्रकाश रुप है।

पदार्था भावनी—ज्ञात ज्ञातेन प्रकाशेन ओत-प्रोतः। साधारण हनुमान, प्रह्लाद आदि ये लोग युद्ध भी किये परन्तु

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

सर्वत्र चेतन का ही दर्शन किये। अतः उस अवस्था में ज्ञात ज्ञातेन प्रकाशाभासेन ओत प्रोतः थे।

परन्तु जब शास्त्रीय ज्ञान का ज्ञानी अर्थात जानकार होते हुए भी विषयों में लीन होता है उसके लिये यह पद कहा गया है। और अज्ञानी के लिए तो यह कहा गया है कि "ज्ञात ज्ञातेन प्रकाशा भासेन ओत-प्रोतः।

स्वभाव लक्षणम् —"चित् चिद्भास" यहां चित् शब्द से आत्मत्व भाव अर्थात् व्यष्टिभाव होगा। यह शब्द जब जगत को निमित्त कर प्रयोग किया जायेगा तब 'चित्' से ब्रह्मात्म भाव हो जायेगा।

चित्, चिद्भास; अन्तकरण का परिमाण अविद्या-लेशात्मक तदात्म्य आस्वद आत्मत्व भाव ही स्वभाव है। यहां स्वभाव से स्वश्चासौभावः स्वभाव, कर्मधारय समास है। अथवा अन्तकरण का परिमाण रुप अविद्या तदात्म्य लेशा-स्पात्मत्व भाव यही व्यावहारिक जीव है। कर्ता-भोक्ता कहते हैं। और जब आस्पद आत्मत्व भाव रह जायेगा तब पारमार्थिक रुप हो जायेगा तब कहा जायेगा कि 'अय-मात्मा ब्रह्म'।

इन सभी बातों को स्वामी कठौता बाबा ने सरल भाषा में समझाने का प्रयास किया है। यह पुस्तक साधारण जिज्ञा-सुओं तथा उच्च कोटि के मुमुक्षुओं दोनों के लिये लाभ-प्रद है।

चौरा
२९-१२-८४

स्वामी शीवानन्द परमहंस
(लज्जा बाबा)

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

सम्मति

'मोक्षोपाय, में ब्रह्मलीन स्वामी राजाश्रण परमहंस के कुछ प्रवचनों का संग्रह है। इसमें स्वामी जी ने गीता के आधार पर सरल भाषा में मोक्ष के उपाय का वर्णन कर मुमुक्षु जनों का महदुपकार किया है। 'दुर्लभो मानुषो देही' के अनुसार सभी को सुअवसर मिला है। इसका सदुपयोग करना ही श्रेयस् है।

योगी राज भगवान श्रीकृष्ण ने निष्काम कर्मयोग के द्वारा कर्मयोगियों का मार्ग निर्धारित किया है। इसी का आश्रय ज्ञानी और भक्त भी लेते हैं।

तरवोऽपि जीवन्ति, जीवन्ति पशु पक्षिणः।
स जीवति मनो यस्य मनने नोप जीवति॥

पेड़, पौधो, पशु-पक्षी सभी जीते हैं, परन्तु सच्चा जीवन वह है, जिसमें विचार किया जाय, मनन किया जाय। इस तत्व को इसमें सूक्ष्मता के साथ समझाया गया है।

यह कृति एक तत्वदर्शी महात्मा की है, जिसमें उनका अनुभव भी है। अतः यह आज के भ्रमित-पथिकों के लिये सबल सम्बल है। यह पठनीय, मननीय और संग्रहणीय है।

मौनी अमावश्या २०४० स्वामी सदानन्द सरस्वती

माघ-मेला (वेदान्ती जी)
प्रयाग
दिनांक २१-१-८४

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

निवेदन

'मोक्षोपाय' में ब्रह्मलीन स्वामी ब्रजवासी बाबा के कति. पय प्रवचनों का संग्रह है। मैंने इसे मुद्रित कराने का संकल्प इसलिये किया कि आज के आर्थिक दौड़-धूप के युग में 'मानव' अपने मानवीय धर्म को भूलकर दिग्भ्रमित हो रहा है। उसे उसका सरल मार्ग दिखाना ही हमारा उद्देश्य है। स्वामी जी का पार्थिव शरीर हमारे बीच नहीं है। परन्तु इस संग्रह से उनकी वाणी निसृत 'सुधा-रस' सभी पिपासुओं को तृप्त करेगा। ऐसा मेरा विश्वास है।

इसी विश्वास के साथ यह पुस्तक आपके हाथ में है। इसे एक बार ही नहीं अनेक बार पढ़ें; समझें और आत्मोद्धार के मार्ग पर अग्रसर हों।

दुलहपुर (बलिहार)
भोजपुर (बिहार)
बसन्त पंचमी २०४०
स्वतन्त्रता दिवस

विश्वनाथ ब्रह्मचारी
व्यवस्थापक
'धर्म निष्ठा'

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

क्षमा याचना

'मोक्षोपाय' आपके हाथ में है। इसके प्रकाशन में प्रातः स्मरणीय, परमश्रद्धेय; स्वामी ईशानानन्द सरस्वती (पशुपति बाबा) का आशीर्वाद है। अतः यह वरेण्य है।

इसके मुद्रण का भार मेरे ऊपर था। जिसका सम्यक परिपालन मैं नहीं कर सका और वर्तनी आदि की कुछ अशुद्धियां रह गई हैं। इसके लिए सुधी पाठकों; प्रेमी भक्त जनों और इस मार्ग के यत्किञ्च अनुयाइयों से क्षमा याञ्चना के साथ सादर निवेदन है कि वे प्रसंगानुसार सुधार लें।

पुस्तक के सम्बन्ध में वयोवृद्ध; बौद्ध और वेदान्त दर्शन के गहन अध्येता; परमहंस; परिव्राजक स्वामी शिवानन्द जी ने अपने विचार देकर इसके गुरुत्व में गुणात्मक वृद्धि की है। वे ब्रह्मलीन कठौता स्वामी के परम नैकट्य सहचर रहे हैं।

स्वामी सदानन्द सरस्वती (वेदान्ती) जी ने अपनी व्यस्तता में दो शब्द पुष्प देकर इसकी गरिमा में श्रीवृद्धि की है। वे वन्दनीय हैं।

आदरणीय ब्रह्मचारी विश्वनाथ जी इसके प्रेरक स्रोत हैं। यह उन्हीं की है। वे स्वयं धन्य हैं। 'उत्तम' दैनिक के सम्पादक तथा मुद्रक पं० रामजी तिवारी ने प्रसन्नता और मनोयोग से इस कार्य को किया है। अतः उन्हें साधुवाद है।

(डा०) लक्ष्मी शंकर त्रिवेदी, पी०एच०डी०
पत्रकार, स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी
राष्ट्रपति से पुरस्कृत

नरही
१-२-८५

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

संक्षिप्त परिचय

पूज्यपाद ब्रह्मर्षि
राधा शरण परमहंस

परम वीतराग, तपोनिष्ठ, अध्यात्मविद स्वामी राधा शरण परमहंस का जन्म लीला बिहारी भगवान श्रीकृष्ण के पावन ब्रजमण्डलान्तर्गत पचहरा ग्राम गोरई इमलास जनपद अलीगढ़ के स्वनाम धन्य पं० चन्दन राम उपाध्याय के पुत्र रुप में सम्बत १९६२ विक्रमी के पौष कृष्ण प्रतिपदा को हुआ था।

स्वामी जी को बचपन का नाम उमराव उपाध्याय था। आप पिता की ज्येष्ठ सन्तान थे। एक भाई और एक बहन भी थी। बचपन से ही ये प्रखर प्रतिभा के कारण अपने समवयस्कोंमें विशिष्ट स्थान रखते थे। आपके चरित्र निर्माण में धर्मनिष्ठ, सात्विक पिता का प्रभावाधिक्य था।

प्रारम्भिक शिक्षा के बाद आप उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में प्रवेश लिए किन्तु आपका चित्त वैराग्योन्मुख होने से यह क्रम टूट गया और परिवार वालों ने आपको बन्धन में डालने के लिए विवाह भी कर दिया। परन्तु आप में उत्तरोत्तर वैराग्य की भावना का प्राबल्य हुआ और आप पत्नी के प्रति धर्म का निर्वाह करने के लिए एक पुत्र रत्न भी दिए। पश्चात अठारह वर्ष की आयु

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

में आप अहमदाबाद धन कमाने के बहाने से गये और वहीं से भगवद् भजन, शास्त्र चिन्तन और तिर्थाटन में रम गये। आपने भारत के प्रायः सम्पूर्ण तीर्थों का भ्रमण किया तथा कश्मीर के सुरम्य क्षेत्रों में भी निवास किया। पांच वर्षों के बाद पूजनीय माता जी को प्रणाम करने हेतु मातृभूमि पर गये और वहां से उत्तराखण्ड हिमालय के प्रयटन के लिये निकल पड़े। पश्चात गंगा के पावन तट पर विचरण करते हुए सतों के परामर्श से सन्यास लेकर स्वामी राधा शरण परमहंस के नाम से विचरण करने लगे। ब्रजभूमि के होने के कारण भक्तगण आपको 'ब्रज वासी' स्वामी के नाम से पुकारने लगे।

आप अपनी साधनाकाल में १२ वर्ष तक मौनव्रत धारण किये रहे जिससे सम्बन्धित क्षेत्र में आप मौनी बाबा' के नाम से विख्यात हुए। आप काठ के बर्तन में भिक्षा करने के कारण पूर्वांच गांगेय तट पर 'कठौता बाबा' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

भ्रमण काल में ही आपने शास्त्रों, उपनिषदों एवं श्रीमद् भागवत का गहन अध्ययन किया। श्रीमद् भागवत तो आपको कंठस्थ था। और आपकी कथा से जन-जन अप्याथित होता था।

आपकी सबसे अधिक विशेषता यह थी कि आप शीत-उष्ण और बरसात सभी में एक सम रहते थे। एक चादर पर ही आपने १९३४ के पूर्व नेपाल का भ्रमण किया।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

बहुधा पुरुष कर्मेन्द्रियों का व्यापार सब ईश्वरार्पण; द्रव्य सम्बन्धी अथवा बिना द्रव्य सम्बन्धी क्रिया को तथा अन्य जाति, कुल-गोत्र सम्बन्धी कर्मों को ही कर्मयोग कहते है कर्मेंद्रियों के द्वार। जो भी कर्म हो, भगवदर्पण, भगवदर्थ किया जाय, वह कर्म योग है।' भगवान कर्मयोग को आत्म विचार का एक स्वतन्त्र-साधन कहते हैं। अविद्या द्वारा कर्म होता है, इससे अविद्या जनित कर्म का अविद्या की निवृति कैसे कर सकता है? कर्म योग से भगवान को मन का संयम रूप योग मान्य है और बाह्य कर्मेन्द्रियों का व्यापार मन के संयम का सहायक होने से कर्म योग शब्द द्वारा अभिहित किया गया है।

मन के संयम के लिए कर्म का त्याग परमावश्यक है। जब आत्म-विचार होकर संशय,भ्रम निवृत होंगे, तो पीछे निरहंकारता में यदि कर्म होगा तो बन्धन नहीं होगा और यदि न करेगा तो कोई प्रत्यवाय भी नहीं होगा। क्योंकि अहंकार पूर्वक किया हुआ कर्म से बन्धन होता है और यावत् देहाभिमान है, तावत् अज्ञानियों के निमित्त कर्म न करने से प्रत्यवाय वेद में कहा है। ज्ञानवान का अनात्म अहंकार निवृत होता है. इससे कर्म करने से बन्धन और न करने से प्रत्यवाय नहीं होता है। कर्म का त्यागी हो अथवा कर्म करने वाला, परन्तु जिसने मन के सयम पूर्वक आत्म विचार किया है वे दोनों ही कर्म योगी हैं। क्योंकि दो निष्ठाओं में से जिस निष्ठा से जो आत्म-साक्षात्कार

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

किया है, वह उसी नियम का योगी है। कर्म करने या न करने से कोई प्रयोजन नहीं। ज्ञान; कर्म का क्रम समुच्चय यह विधायक वाक्य है।

मुमुक्षुओं का साध्य

देहाभिमान तथा देहाभिमान से उत्पन्न हुई भोगों की वासना ही प्राणियों के जन्म-मरणरूप संसार प्रवाह तथा शोक-मोह का कारण है;भोगों की कामना करके ही मनुष्य नाना प्रकार के शुभाशुभ कर्म करते हैं। जिससे कर्म से जन्म, जन्म से कर्म इस प्रकार का संसार प्रवाह अनादि काल से चला आ रहा है; कभी विश्राम नहीं मिलता। इससे वासना निवृति पूर्वक देहाभिमान की निवृति ही मुमुक्षुओं की साध्य वस्तु है। जिस प्रकार स्वप्न काल में निद्रा दोष से जाग्रत देह को भूल कर स्वप्न देह में अहंकार होता है, उसी प्रकार मन के फुरने पर प्रथम इस जाग्रत देह तथा इस जाग्रत जगत का ज्ञान हुआ है,पीछे से संकल्प की दृढ़ता से जाग्रत की सत्यता और देह में अहंकार हुआ है। जिससे आत्म स्वरूप का ज्ञान नहीं होता है। इसी से देहाभिमान की निवृति के लिये आत्म-विचार और आत्म विचार के लिये मनका संयम आवश्यक है।

अन्य कोई कर्तव्य नहीं है। शास्त्रों में जो वर्णाश्रम धर्म-रूप द्रव्य सम्बन्धी अथवा बिना द्रव्य की नित्य नैमितिक क्रियायें कर्तव्य रुप से कही हैं, वे परम्परा करके मन के संयम में सहकारी हैं। अतः उसे कर्तव्य कहा गया है। क्योंकि काम्य और निषिद्ध कर्मों में लगा हुआ मन संयमी

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

नहीं होता। प्रयोजन सभी का मन के समाधान में है। जैसे बिना जागे स्वप्न देह तथा स्वप्न जगत दूर नहीं होता, उसी प्रकार बिना विचार के जगत की सत्यता और देहाभिमान की निवृत्ति नहीं हो सकती। जिस प्रकार रस्सी के अज्ञान से भासित सर्प रस्सी के ज्ञान से दूर होता है, उसी प्रकार आत्मा के अज्ञान से दिखाई देने वाला जगत आत्मा के ज्ञान से ही दूर होगा। जिस प्रकार एक मृत्तिका के ज्ञान से नाना प्रकार का भूत-भौतिक मृत्कार्य जानने में आयेगा, उसी प्रकार सम्पूर्ण जगत दीवार पर खींचे चित्र का सा दिखाई देगा। देहाभिमान से ही जगत का नानात्व दृढ़ होता है। इससे नानात्व देखने वाले को मृत्यु से मृत्यु को प्राप्त होने वाला कहा है और एकत्व देखने वाले को शोक मोह से रहित कहा है।

प्रायः सब लोग अपने को कहा करते हैं कि हम बन्धन में हैं, यह देहाभिमान और देहाभिमान से उत्पन्न हुई भोगों की वासना ही बन्धन है। यह देह आत्मा नहीं है, परन्तु जिस प्रकार ब्राह्मण अपने ब्राह्मणत्व को भूलकर शूद्रत्व को अंगीकार करे, उसी प्रकार अनात्म देह में आत्म बुद्धि हुई है। इस अनात्म अहंकार की निवृत्ति ही मुक्ति है। परमार्थतः जिस प्रकार सूर्य में रात-दिन दोनों ही नहीं है; उसी प्रकार आत्मा में बन्धन-मोक्ष दोनों ही नहीं है। आत्मा तो ज्ञान और अज्ञान दोनों का साक्षी निर्विकार स्थित है। जैसे बादल के आने पर सूर्य का अभाव और हटने पर भाव निश्चय होता है, उसी प्रकार आत्मा सूर्य की भाँति

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

दोनों दशा में भाव रूप है। अविचार से आत्मा का अभाव और विचार से भावरूप निश्चय होता है। भावरूप पदार्थों का कभी अभाव नहीं होता।

मन के संयम का क्रम

वासना अनादि काल से मन में स्थित है इससे मन अपना स्थान हृदयाकाश को छोड़कर प्राण का साथ किया है। पीछे इन्द्रियों का विकास होने पर इन्द्रियों द्वारा इस पंच विषय वाले जगत को देखा है। इसके बाद जगत की भावना करके तथा देह में अहंकार करके, विषयों को भोगता है और चिन्तन करता है, कभी विश्राम नहीं पाता। इससे साधक को उचित है कि संसार से वीतराग होकर नित्य एकान्त में आसन मार कर बैठे। वाणी को बन्द करे; नेत्रों को भी स्थित करे, पलक न फिरे और इधर-उधर भी न देखे। बाहरी आकृति इस प्रकार रखे और भीतर किसी प्रकार का चिंतन न करे। मन से लगातार मन्त्र का चिंतन करे। इन्द्रियों से आये हुए विषयों को भी ग्रहण न करे। इस प्रकार मानसिक जप करने से मन इन्द्रियों का साथ छोड़ देगा, जिसमें न विषयों को भोगेगा न ज्ञान ही करेगा तथा जगत का मनन-स्मरण भी न होगा। यही इन्द्रियों के परे मन की स्थिति है, इस स्थिति में इन्द्रियों का मन में लय है।

प्राण के उपासकों की प्रथम मात्रा अकार का उकार में लय भी यही है। जब मन मंत्र के साथ भली प्रकार

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

स्थित हो जाय, तब उसे समाधान करने के लिए प्राण के साथ लगाना चाहिये। प्राण के साथ लगने पर मंत्र का भी चिन्तन छूट जायेगा। केवल प्राण ही रजोगुण रूप में रहेगा। प्राण के साथ मन लगाना इस प्रकार है— कि प्राण हँ" शब्द से बाहर आता है" सः शब्द से भीतर प्रवेश करता है अर्थात् प्राण की "हंस" श्वासोच्छास रूप गति है इसी के साथ मनको लगावे। जब कुछ काल दृढ़ अभ्यास करने पर मन प्राण के साथ भली प्रकार एकत्र हो जाय, तब या तो प्राण के साथ रजोगुण से घृणा कर सुखाभिलाषीमन प्राण का साथ छोड़कर हृदयाकाश में स्थित हो जायेगा, नहीं तो प्राण को हृदयाकाश में ठहरा दे; जिसमें प्राण के साथ लगा हुआ मन भी हृदयाकाश में ठहर जायेगा। प्राण को रोकने में योग शास्त्र विषयक किसी भी क्रिया की आवश्यकता नहीं, केवल प्राण जब भीतर जाय तब उसे वहीं स्थिर कर दे और जहाँ प्राण ठहरा है वहीं मन को स्थिर करे। इस स्थिति में एक बात की सावधानी रखे कि कहीं मन हृदयाकाश को छोड़कर बाह्य चिन्तन न करने लगे। जब कुछ काल प्राण रोककर मन को ठहराया जायेगा तब पीछे उसका स्वभाव ही शान्त बन जायेगा अर्थात् बिना प्राण रोकेही ठहरा रहेगा। इस प्रकार जो मन का हृदयाकाश में ठहरना है। "शम" कहलाता है। यही मन से परे बुद्धि की स्थिति है और मन का बुद्धि में लय है।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

रजो गुण से रहित शान्त मनही का नाम बुद्धि है। इस अवस्था में मन या तो शान्त ही रहेगा, नहीं तो फुरने पर केवल ज्ञान मात्र ही करेगा। यही प्रणव उपासकों की द्वितीय मात्रा "उकार" का "मकार" में लय है।

इस हृदयाकाश की स्थिति में मन का भीतरी-बाहरी व्यापार शान्त है परन्तु मन बना हुआ है। अभी मनोनाश नहीं। जब मन हृदयाकाश में स्थित होगा, वहां साक्षी रूप से आत्मा का अनुभव होगा अर्थात् मन ठहर गया; इस प्रकार मन की स्थिरता का ज्ञाता मन से भिन्न कोई दूसरा होगा। इस प्रकार प्रथम भिन्न आत्मा का अनुभव होगा और मन जब उस साक्षी आत्मा में स्थिर होगा, तब मनका नाश होगा और आकाश भी न भासेगा अर्थात् किंचित जगत न रहेगा। वही आत्मा ब्रह्म है। मन के एक देशी होने से भ्रान्त वश आत्मा में एक देश की कल्पना होती है। मनोनाश होने पर पूर्ण ही अनुभव करेगा। इस अवस्था में केवल स्वयं शेष रहता है और दृश्य की भावना दूर हो जाती है। जिससे फिर भोगों की वासना नहीं फुरती तथा ब्रह्मात्म बुद्धि होने पर फिर देहात्म बुद्धि नहीं होती। यही ब्राह्मी स्थिति है। इस स्थिति में पहुँच कर मुमुक्षु कृत कृत्य हो जाता है। इसी मन की अहंकार वृत्ति को उपशम कहते हैं। यही बुद्धि से परे आत्मा की स्थिति है और बुद्धि का आत्मा में लय है। प्रणव उपासकों की तृतीया मात्रा 'मकार' का अमात्रा में लय है, यही सबकी पराकाष्ठा है,

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

जिसे पाकर और पाना तथा जानकर और जानना शेष नहीं रहता।

आत्म विचार का दूसरा प्रकारः-

तालाबरूपी उपाधि करके तीन प्रकार का प्रतीत होता, जिस प्रकार एक तालाब में अपेक्षा से तीन प्रकार का भासता है। एक तालाब में प्रतिविम्ब। दूसरा जितने देश का प्रतिबिम्ब वह बिम्ब तीसरा महाकाश, इनमें प्रतिबिम्ब मिथ्या है और बिम्ब महाकाश रूपही है। तालाब आकाश के एक देश में है उसी से बिम्ब एक देशी भासता है। परमार्थ से आकाश में विभाग नहीं। उसी प्रकार बुद्धि की अपेक्षा से आत्मातीन प्रकार काहै,एक बुद्धिमें प्रतिबिम्बरुप आभास। दूसरा बुद्धि का साक्षी बिम्बरुप क्षेत्रज्ञ। तीसरा पूर्ण ब्रह्म। इनमें से प्रतिविम्ब रुप आभास मिथ्या है। क्षेत्रज्ञ ब्रह्म रूप ही है। भ्रान्ति के कारण बुद्धि के एक देशी होने से क्षेत्रज्ञ एक देशी भासता है। जिस प्रकार घटों की उपाधि से आकाश अविभक्त होता हुआ भी विभक्त भासता है। वास्तव में जैसे सब घटों में एक ही आकाश निर्विकार है, वैसे ही एक आत्मा अविभक्त होते हुए भी बुद्धियों की उपाधि से विभक्त भासता है। परमार्थतः सब बुद्धियों का प्रकाशक साक्षी निर्विकार है जैसे नेत्र अध्यात्म है, हृदयाकाश अधिभूत है और आत्मा भिन्न पूर्ण रूप अधिदैव है। अधिदैव की सत्ता से ही अध्यात्म और अधिभूत की सत्ता है। ऐसा जानकर अधिदैव को ही ग्रहण करना चाहिये।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

'बोध की पुष्टि के लिए कुछ अन्य विचार'

(१) जिस प्रकार एक दीवाल पर खींचे हुए नाना प्रकार के चित्रों का आधार दीवाल ही होता है, उसी प्रकार आत्मा ब्रह्मरूप से इस संसार के सजातीय विजातीय तथा स्वगत भेद वाले जगत का आधार है। जहाँ आधार चैतन्य होता है वहां वही द्रष्टा हुआ करता है। जैसे छाया में कल्पित वैताल का आधार बालक है और चैतन्य होने से वही स्वयं द्रष्टा है। जहां आधार जड़ होता है वहां द्रष्टा कोई भिन्न होता है। जैसे मृग तृष्णा के जल का आधार मरुभूमि जड़ होने से उसका द्रष्टा मृग एक भिन्न होता है। इसी प्रकार जगत का आधार ब्रह्म चैतन्य होने से वह स्वयं द्रष्टा होता है। अन्य कोई नहीं। ब्रह्म कहें या जीव, दोनों पर्यायवाची शब्द हैं। इससे जीव-ब्रह्म; जगत ब्रह्म और जीव-जगत तीनों अभेद हैं अर्थात् ब्रह्म ही वृक्ष की भांति भूत-भौतिक जगत रूप होकर स्थित है। और वही प्रति शरीर में क्षेत्रज्ञ होकर स्थित है। भ्रान्तिवश बुद्धि के एक देशी होने के कारण साक्षी में एक देश को लेकर पूर्णसत्ता से भेद की कल्पना होती है। परमार्थ से पूर्ण ब्रह्म ही क्षेत्रज्ञ है। वेद ने ब्रह्म को अखण्ड कहा है यदि खंड माना जाय तो उसे ब्रह्माण्ड का आधार ही नहीं माना जा सकता, दूसरे एक आधार पर दो चेतन का होना संभव नहीं, क्योंकि चक्रक दोष होगा अर्थात एक का द्रष्टा दूसरा दूसरे का तीसरा और तीसरे का चौथा अर्थात् कहीं स्थिति नहीं होगी। इसमें किंचित द्वैत का स्थान नहीं।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

द्वैत के द्रष्टा में श्रुति भय का संकेत करती हैं।

(२) जिस प्रकार तरंग की सत्ता जल से भिन्न न जानकर जल ही निश्चय करता है। दूसरा जल और तरंग में भिन्न-भिन्न भावना करके जल में तरंग है ऐसा निश्चय करता हैं। तीसरा केवल तरंग ही निश्चय करता है और जल का अभाव बतलाता है, परन्तु भाव रूप जल का अभाव नहीं। अर्थात् तीन प्रकार की बुद्धि होते हुए भी अधिष्ठान रुप जल विद्यमान ही है। उसी प्रकार एक ब्रह्म कोजगत सहित होते हुए मनुष्यतीन प्रकार से देखते हैं। एक जगत की सत्ता ब्रह्म से भिन्न न जानकर ब्रह्म ही है ऐसा निश्चय करता हैं। दूसरा ब्रह्म और जगत में भिन्न-भिन्न भावना करके ब्रह्म में जगत है, ऐसा निश्चय करता है। तीसरा केवल जगत का ही निश्चय करता है और ब्रह्म का अभाव देखता हैं। परन्तु तरंग कहते समय जल का निश्चय करते हुए भी जल विद्यमान है। सत्य पदार्थ का कभी अभाव नहीं होता और जिसका भावाभाव हो उसे, अभाव रूप ही जानिये। इससे जगत भावाभाव रुप होने से अभाव रुप है। जैसे रस्सी सत्य होने से भाव रुप है, सर्प असत्य होने से भावाभाव वाला है। विद्वान परमार्थ सत्ता को ही ग्रहण करते हैं। प्रतिभासित और व्यावहारिक सत्ता को ग्रहण नहीं करते।

(३) सम्पूर्ण शब्द श्रोत के आश्रय हैं, सम्पूर्ण स्पर्श त्वचा के आश्रय है। सम्पूर्ण रुप नेत्र के आश्रय है। सम्पूर्ण रस जिह्वा के आश्रय है। सम्पूर्ण गन्ध नासिका के आश्रय

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

है। इससे पंच विषय वाला जगत इन्द्रिय जन्य ज्ञान करके सत्य भासता है। इन्द्रियाँ बुद्धि के आश्रय हैं और बुद्धि जब इंद्रियों का साथ छोड़कर ठहरती है तब आकाश रूप होती है। इससे बुद्धि जन्य ज्ञान जगत आकाश रुप है। बुद्धि आत्मा के आश्रय है। आत्मा ब्रह्म रुप है। इससे अनुभव जन्य ज्ञान करके जगत ब्रह्म रुप है। इसी प्रकार सर्वाधिष्ठान ब्रह्म को अहम रुप से निश्चय कर्ता को भेद भ्रान्ति नहीं होती।

(४) आत्मा में सजातीय भेद जैसे मनुष्य का मनुष्य से वह नहीं क्योंकि आत्मा एक है—'एकत्वात' विजातीय भेद, जैसे पशु पक्षी का परस्पर भेद, वह भी आत्मा में नहीं, क्योंकि आत्मा निर्विकार है, 'निर्विकारत्वात' स्वगत भेद, जैसे एक ही पेड़ में डाली, पत्ता, फूल और शाखा इत्यादि, वह भी नहीं, क्योंकि आत्मा निरवयव है 'निरवयवत्वात' आत्मा में देश परिच्छेद नहीं, क्योंकि आत्मा व्यापक है। काल परिच्छेद नहीं क्योंकि नित्य है। वस्तु परिच्छेद नहीं, क्योंकि सर्व रूप है। आत्मा देह से भिन्न है। अतः देह के व्यापार, अवस्था; धर्म तथा भावाभाव में आत्मा की कोई क्षति नहीं।

(५) आत्मा का ज्ञान त्रिपुटी के साथ नहीं होता, क्योंकि ब्रह्म रुप आत्मा एक है और मैं ज्ञाता एक भिन्न हूँ। यदि ऐसा माना जाय तो आत्मा अन्य वस्तुओं की भाँति जड़ ठहरेगा। आत्मा किसी इन्द्रिय तथा अन्तः करण का विषय नहीं। दृश्य सब जड़ है। जिस प्रकार घर

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

के आश्रय से ही घट के द्रष्टा का ज्ञान होता है जैसे मैं क्षेत्र नहीं, क्षेत्र का ज्ञाता हूँ। इस प्रकार अपने को भिन्न निश्चय कर अभय होता है।

(६) जिस प्रकार वायु चलता हैतो ज्ञान होता है और ठहरता है तो आकाश रूप होता है। उसी प्रकार जब चित्त फुटता है तब जगत रुप से ज्ञान होता है और जब चित्त का अभाव होता हैं तो ब्रह्म रूप होता है। जिस प्रकार अमावश्या की रात्रि में चन्द्रमा सूर्य के अन्तर्गत विलीन हो जाता है, उसी प्रकार आत्मा स्थित होने पर चित्त की कोई सत्ता नहीं रहती, एक आत्मा ही शेष रहता है। जिस प्रकार वायु के चलने और न चलने में अर्थात् दोनों दशा में आकाश ज्यों का त्यों रहता है। वि चित विकार को प्राप्त नहीं होता। उसी प्रकार चित्त के फुटने न फुटने दोनों दशा में आत्मा निर्विकार स्थित रहता है। जब चित फुटता है तब मनका साक्षी होता है और जब चित्त का अभाव होता है तब साक्षी भाव भी नहीं रहता।

'मन की पाँच वृत्तियाँ'

१- क्षिप्त-जब मन इन्द्रियों के साथ मिलकर विषय पदार्थों को भोगता है उस अवस्था में क्षिप्त या घोर भाव रहता है।

२- मूढ़ जब मन वासनामय होकर जगत का चिन्तन करता है उस अवस्था में मूढ़ भाव रहता हैं। यह भाव जाग्रत में मनो राज्य रुप से और निद्रा काल में स्वप्न रूप से रहता हैं।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

३- विवेक ख्याति- जब मन न तो चिन्तन करता है और न विषयाकार होता है, केवल विषयों का ज्ञान करता है वह वृत्ति विवेक ख्याति है। ऊपर लिखी तीनों वृतियाँ प्रवृत दशा में होती हैं एक काल में एक रहती हैं और शेष दो का अभाव रहता है।

४- एकाग्र-जब मन का भीतरी-बाहरी सब व्यापार शान्त रहता है उस अवस्था में एकाग्रता होती है, इस अवस्था में मन हृदयाकाश में अचल रहता है। जाग्रत में ध्यान रुप से और निद्रा में सुषुप्ति रूप से।

५-निरुद्ध-इस अवस्था में मन का नाश होता है और ब्रह्माकार होकर ठहरता है। वहाँ किंचित भी भीतर कुछ नहीं देखता, सम्पूर्ण दृश्य का बाध होकर केवल द्रष्टा मात्र ही शेष रहता है। यही बोध की स्थिति है।

'मनोनाश होने पर संघात के निषेध का विचार'

यह देह आत्मा नहीं है। देह पांचों भूतों के तामस भागों से मिलकर बना है। इन्द्रियां भी आत्मा नहीं क्योंकि कर्मेन्द्रियों प्रत्येक भूतों के राजस भागों में एक-एक है तथा ज्ञानेन्द्रियाँ भी प्रत्येक भूतों के सात्विक भागों से मिलकर बना है। प्राण भी आत्मा नहीं। ये पांचों भूतों के राजस भागों से बना है और देह की भांति जड़ है। मन तथा बुद्ध भी आत्मा नहीं हैं। यह भी माया का कार्य है। पांचों भूतों के सात्विक भागों से बना है। गुण और अवस्था करक व्यभचारी हैं। बिना किसी साक्षी के कार्य नहीं कर सकते। इस प्रकार पंचभूतों के कार्यरुप संघात का

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

निषेध करके शेष जो साक्षी है, क्षेत्रज्ञ हैं उसी में आत्मा बुद्धि करे। वह आत्म ब्रह्म है, जब इस प्रकार निश्चय 'आत्माब्रह्म' होगा; तब 'सोहमस्मि' अर्थात मैं ब्रह्म हूँ ऐसे वाक्य का अधिकारी होगा। वेदान्त शास्त्र में कहे हुए पांच कोश; तीन गुण, तीन अवस्था और तीन देह तथा पंचभूत ये सब मन के अन्तर्गत हैं। मन के संयम होने पर सबसे भिन्न सबका साक्षी आत्मा का अनुभव होगा। ऊपर लिखे अनुसार ही सबका अन्वय-व्यतिरेक करके ही सांख्य योग पद्धति से आत्मा का अनुभव किया जाता है। दोनों का फल एक होने से दोनों मार्गों में से एक पर चलकर कल्याण प्राप्त हो सकता है।

'आत्म विचार का फल'

आत्म विचार होने पर अनात्म अहंकार छूट जाता है। पश्चात मनुष्य शोक-मोह से रहित हो, दुःख-सुख में सम रहकर प्रारब्ध को भोगता है। भोग समाप्त होने पर बिना तेल के दीपक की भाँति अनायास निर्वाण पद को प्राप्त होता है। विद्वान को कर्त्तव्यता और कर्तापन नहीं रहता, इससे कर्म बन्धन नहीं होता। (कृतकृत्य होने पर अकर्मण्य होने से दोष भी नहीं लगता) अर्थात् गुणों से बाह्य परमाकतत्वही है। सृष्टि के समस्त गुणों से बाह्य नहीं है। अतः यहां दोष 'शब्द' गुण का बिकार ही दोष है यथा फेन का जल का ही विकार है। जीवनमुक्तावस्था वाले को ज्ञानवान के मरने में देश, काल तथा अवस्था का कोई भेद नहीं। पवित्र तीर्थ में मरे अथवा

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

चाण्डाल के घर में मरे। उत्तरायण में मरे या दक्षिणायण में। शुक्ल पक्ष हो या कृष्ण पक्ष हो, ध्यान लगाये हुए हो या व्यवहार करता हो। किसी में कोई क्षति नहीं। ज्ञान होते ही उसके सब संशय की निवृत्ति हो जाती है और बन्धन से मुक्त हो जीवन यात्रा समाप्त करता है।

(इति कर्म योग)

"मोक्षोपाय"

एक निष्ठा··· ···सांख्य योग

इस संख्य मार्ग के जिज्ञासु की साध्य तथा बोध की स्थिति कर्मयोग की भाँति ही है। केवल साधन में अन्तर है। कर्मयोगी मन का संयम कर आत्म विचार करता है। सांख्य योगी तत्व विचार कर अन्वय-व्यतिरेक द्वारा आत्म साक्षात करता है। यह मार्ग किसी आश्रम विशेष से सम्बन्ध-नहीं रखता और कर्म के करने अथवा न करने से सम्बन्ध नहीं रखता है केवल मुमुक्षु की बुद्धि जैसी हो, उसी के अनुसार स्थिति में विचार कर सकता है। कोई व्यवहार करते ही विचार कर लेता है। कोई शम, दम और साधन सम्पन्न होकर विचार में समर्थ होता है। इस मार्ग में बहुधा पाँच भूत, पाँच कोश तीन शरीर और तीन अवस्था का अन्वय-व्यतिरेक करके आत्म साक्षात् होता है। इनका विवरण आगे लिखते हैं। अन्वय-व्यतिरेक और लय का एक ही क्रम है। आत्मा से आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से वायु। वायु से

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

तेज। तेज से जल। जल से पृथ्वी। पृथ्वी से औषधि। औषधि से अन्न। अन्न से वीर्य। वीर्य से प्राणी। इस प्रकार सृष्टि का क्रम है। सार पाँच भूत ही लिये जाते हैं। इसी से जगत पंच भूतों का कार्य माना जाता है। पुनः पार्थिव पदार्थों का लय पृथ्वी में। पृथ्वी का जल में। जल का तेज में। तेज का वायु में। वायु का आकाश में। आकाश का आत्मा (ब्रह्म) में। लय करके आत्म साक्षात-कार किया जाता है। इस शरीर में स्थूल पिण्ड पृथ्वी जल रूप है। नेत्र तेज रूप है। प्राण वायु रूप है। हृदया-काश महाकाश रूप है। इस प्रकार जानकर व्यष्टि के साथ समष्टि का लय करके और संघात का क्रम भी लय करके आत्म साक्षातकार होगा।

'पंचकोश'

यह देह रूप संघात पाँच कोशों में विभक्त है। पाँचों को क्रमशः विचार कर, भिन्न साक्षी आत्मा का अनुभव करे।

१—अन्नमय कोश। २-प्राणमय कोश। ३--मनोमय कोश ४—विज्ञानमय कोश। ५—आनन्दमय कोश।

१—अन्न से बना हुआ स्थूल पिण्ड अन्नमय कोश कहलाता है।

२—पांच प्राण। (प्राण, अपान, उदान, व्यान, समान और पांचों कर्मेन्द्रिय (हाथ; पैर, वाणी, गुदा, लिंग) मिलकर प्राणमय कोश कहलाता है।

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

३—पाँच ज्ञानेन्द्रिय (कान, नाक, आँख, त्वचा, जिह्वा और संकल्प, विकल्पात्मक बुद्धि वृत्ति मिलकर मनोमय कोश कहलाता है।

४—पाँचों ज्ञानेन्द्रिय और निश्चयात्मक बुद्धि मिलकर विज्ञानमय कोश कहलाता है।

५—इन्द्रियों से रहित अन्तःकरण की शान्तावस्था जिसमें न कर्मेन्द्रियों का व्यापार होता है न मानसिक, इस अवस्था में पदार्थों से रहित सुख होता है इसी अवस्था का नाम आनन्दमय कोश है।

'तीन शरीर' पांच कोश ही तीन शरीर में विभक्त है। स्थूल-अभयकोश रुप है। सुक्ष्म-प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय रूप है। कारण-आनन्दमय रुप है। कहीं पर अधिभौति और अन्तवाहक दो ही शरीर निश्चय किया गया है।

अधिभौतिक-स्थूल देह, दस इन्द्रियों और पांच प्राण मिलकर है। अन्तवाहक-मनोमय ही है।

'तीन अवस्था'

वास्तव में अवस्था दो ही हैं (जाग्रत और निद्रा) जाग्रत अवस्था दो प्रकार की है। विषय युक्त और ध्यान। निद्रा भी दो प्रकार की है (सुषुप्ति और स्वप्न)। इस प्रकार चार अवस्था हुए परन्तु ध्यान में तथा सुषुप्ति में मन शान्त रहता है। इससे दोनों को एकमान कर तीन अवस्था हुई। ये सब अवस्था बुद्धि की है, पर आत्मा बुद्धि का साक्षी भिन्न स्थित हैं। स्वप्न और सुषुप्ति तमोगुण से

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner

उत्पन्न होता है। अतः इस अवस्था में ज्ञान सम्भव नहीं। जाग्रत विक्षेप रूप है। इसमें भी ज्ञान नहीं हो सकता, इस लिए इन तीनों से रहित ध्यानावस्था (मन की शान्त अवस्था में साक्षी-आत्मा का ज्ञान होता है।

जागृत बुद्धि का इन्द्रियों द्वारा जगत के अनुभव करने को कहते हैं।

स्वप्न—वासना मय जगत जिसमें जाग्रत के संस्कार फुरते हैं।

सुषुप्ति तमोगुण से उत्पन्न शान्त अवस्था जिसमें जड़ता और अज्ञान रहता है।

ध्यान—शान्त अवस्था जिसमें बाहर भीतर का व्यापार नहीं होता केवल प्रकाश और सुख का अनुभव मात्र रहता है। बाहरी क्रिया में तमोगुण, भीतरी क्रिया में रजोगुण और शान्त अवस्था में सतोगुण बर्तता है बुद्धि ही तीन गुण वाली है।

सांख्य मार्ग का दूसरे प्रकार से विचार

जिन पुरुषों ने मन को शान्त किया है वे नीचे लिखे प्रकार से विचार कर सकते हैं—

ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय

व्यष्टि-क्षेत्रज्ञ- अविद्या - हृदयाकाश, समष्टि-महेश्वर; माया-महाकाश।

तदाकारता, उपहित चेतन-बुद्धि-प्राज्ञ।

——

Scanned by CamScanner

Scanned with CamScanner